# चाहे तो पार करो

तपागच्छाधिराज पूज्यपाद आचार्यदेव
**श्रीमद्विजयरामचन्द्रसूरीश्वरजी म. सा.** के
शिष्यरत्न
**मुनिश्री वैराग्यरतिविजयजी**

**प्रवचन प्रकाशन**
४८८, रविवार पेठ
पूणे-२

आवृत्ति : **प्रथम**

मूल्य : **रु. १०-००**

© : PRAVACHAN PRAKASHAN, 2005

**प्राप्तिस्थल**

**पूना** : **प्रवचन प्रकाशन**
४८८, रविवार पेठ, पूना-४११००२
फोन : ०२०-३०९२२०६९,
मो. ९८९००५५३१०

**अहमदाबाद** : **अशोकभाई घेलाभाई शाह**
२०१, ओएसीस, अंकुर स्कूल सामे,
पालडी, अहमदाबाद-३८०००७
फोन : ०७९-२६६३३०८५,
मो. ९३२७००७५७९

**नागपुर** : **दीपक कोचर**
११, केसरियानाथ सोसायटी,
निकालस मंदिर रोड,
ईतवारी,
नागपुर-४४०००२

**अक्षरांकन** : **विरति ग्राफिक्स**, अहमदाबाद
फोन : ०७९-२२६८१८१४

## प्रकाशक की ओर से

**'चाहे तो पार करो'** यह छोटी सी पुस्तिका-**मुनिश्री वैराग्यरति विजयजी** लिखित **'प्रभु क्यारे कृपा करशो'** का हिन्दी संस्करण है ।

चैत्यवन्दन विधि में प्रयुक्त होने वाले **'प्रार्थना-सूत्र'** का हृदयंगम विवरण पूज्य मुनि भगवन्त ने यहाँ प्रस्तुत किया है । जिसका हिन्दी अनुवाद श्री ..... भट्ट ने किया है । आपकी श्रुतसेवा की हम अनुमोदना करते है । **युवा संस्कार ग्रूप-नागपुर** ने इस प्रकाशन का पूर्ण लाभ लिया है । आपकी प्रवचन भक्ति की अनुमोदना ।

**– प्रवचन प्रकाशन,** पूना

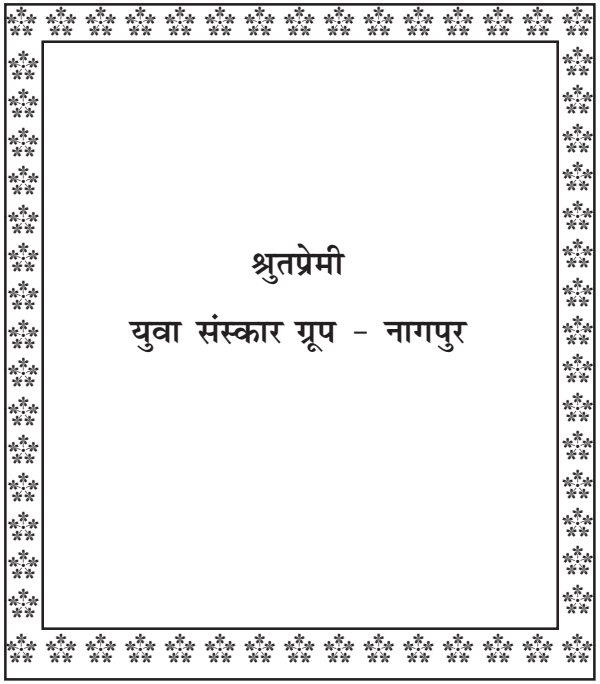


प्रवचन प्रकाशन

# जय वीयराय !

*हे वीतराग परमात्मा आपकी सदा जय हो ।*

हे वीतराग प्रभु ! आपकी सदा जय हो ।
हे जगद्गुरु परमात्मा !
आपके प्रति मेरा निःस्वार्थ प्रेम है,
आप मेरे प्राणप्रिय हो ।
आपके पास आने का मुझे बारबार मन होता है ,
आपको देखके मेरी आँखे कभी
संतृप्त नहीं होती,
मेरे मन के स्मृतिपट पर हमेशा
आपकी याद रहती है ।
ये जिह्वा आपके ही गुणगान गाया करती है,
और अधर पर आपकी ही जयजयकार होती है ।
हे परमकृपालु परमात्मा !
आप मेरे अणु-अणु में व्याप्त हो ।
आप मुझे इतने अच्छे क्यों लगते हो,
जानते हो ?
क्योंकि आप 'वीतराग' हो ।
आपने स्वार्थ, राग, द्वेष, लोभ आदि को
छुआ तक नहीं है ।
आपने इन सबको ठुकराया है ।
आपकी ये वीतरागता का मूल है 'करुणा' ।
हे दीनानाथ परमात्मा !
वीतरागता के विशाल समुद्र को
मेरे छीप जैसे छोटे-से हृदय में



समा लेने का मुझ में
न तो सामर्थ्य है और न तो क्षमता,
फिर भी
विष को अमृत बनाने वाली,
आपकी करुणा के दो बूँद भी
मुझे मिल जाएँ,
तो मैं अपने आपको बहुत भाग्यवान समझूँगा ।
हे प्रभु !
इतनी करुणा हम पर जरुर करना ।
मैंने सुना है कि आपके द्वार से कोई कभी
खाली हाथ नहीं लौटता है ।

## जगगुरु !

*हे जगत के गुरु आपकी सदा जय हो !*

हे परमात्मा ।
आप इस जगत के सभी जीवों के गुरु हो ।
क्योंकि
आप जीवमात्र के मित्र हो ।
आपने तमाम जीवों के हित की
कामना की है और वो भी किसी अपेक्षा के बिना ।
गुरु उसीको कहते हैं,
जो बदले की भावना रखे बिना अपना सर्वस्व देता है ।
''मित्रता'' और ''गुरुता'' दोनों में एक समानता है ।
दोनों देते है, लेकिन मित्र अपेक्षा के साथ देता है,
और गुरु अपेक्षा के बिना देता है ।
हे परमात्मा !
आपने जगत को सर्वस्व दिया है ।
सबकुछ देकर आप जगत्गुरु बन गये हो ।
जबकि
सबकुछ पाकर भी मैं कुछ नहीं बन सका ।
आपकी तरह जगत्गुरु बनने की कल्पना
मैं स्वप्न में भी नहीं कर सकता ।
मुझमें ऐसी योग्यता कहाँ है ?
मैं जगत्गुरु तो क्या ?
गुरु भी नहीं बन सकता ।
हाँ ! आपका भक्त बनने की
योग्यता और सामर्थ्य जरुर मेरे पास है ।



लेकिन भक्त बनना भी कहाँ आसान है ?
शुद्ध, शांत, समर्पित और सरल व्यक्ति में ही
भक्त बनने के लक्षण है ।
भक्त बनने के लिए तो परमात्मा को
अपना दिल देना पड़ता है ।
जैसे अग्नि में हाथ रखकर दाह से बचना असम्भव है,
जैसे कूडे-कचरे में हाथ डालकर गंदकी से बचना असम्भव है,
वैसे ही दिल में संसार रखकर भक्ति करना भी असम्भव है ।
संसार-सागर में आसक्त बनकर भी
मैं आपका भक्त बनूँ ये असम्भव है।
हे प्रभु !
शायद आपका और मेरा गणित
कहीं अलग पड़ता है ।
आपका मत यह है कि मेरा सारा सुख
जगत के सभी जीवों को मिले ।
और मेरी भ्रामक मान्यता यह है कि जगत् का
सारा सुख मुझे मिलें ।
आप अपना सब कुछ जगत पर लूटा रहे हो,
और मैं लूटने में व्यस्त हूँ ।
हे प्रभु !
आप मेरी इस गलती को पलट दो ।
लेनेवाले से देनेवाला बढ़कर है
मैं इस सनातन सत्य को समज सकुँ ।
ऐसी मुझे समज शक्ति दो ।
हे जगत्गुरु !
आप मेरे गुरु बनो, ऐसी हृदयपूर्वक की प्रार्थना ।



## होउ ममं तुह पभावओ भयवं

*भगवन् ! आपके प्रभाव से मुझे यह तेरह वरदान प्राप्त हो ।*

शीशे से बना हीरा भले चमकीला हो,
उसका मूल्य शून्य होता है ।
नकली मोती भी भले चमकीला हो,
मूल्यहीन है ।
हीरे की चमक और मोती की चमक तभी मूल्यवान बताई जाती
है, जब वे हीरे-मोती असली हो ।
''चमक'' हीरे-मोती का प्रभाव है ।
जबकि हीरे-मोती का स्वभाव अलग ही है ।
कुशल जौहरी ही उसको परख सकता है ।
इस सत्य को हम अच्छी तरह से पहचानते हैं,
और इसलिए हीरो-मोती की पसंदगी करते
समय हम स्वभाव को छोड़कर सिर्फ प्रभाव से
प्रभावित होते नहीं है ।
प्रभु !
आपके पास आने के बाद आपके प्रभाव से अतिरिक्त आपके
स्वभाव की मुझे अनुभूति हो
ऐसी मेरी अंतःकरण पूर्वक भावना है ।
आपकी वीतरागता तक हमें पहुँचना है ।
इसलिए हमारे सुखशील स्वभाव को वीतरागता में पलट दें,
ऐसे आपके प्रभाव का हमें अनुभव करना है ।
हमारी यह इच्छा सफल हो ऐसी हमारी आपसे प्रार्थना है ।

# भवनिव्वेओ

*प्रभु ! संसार के पागलपन से मुक्ति दो ।*

वह बहुत सुखी है । उसे रहने के लिए
बहुत सुन्दर जगह मिली है ।
उसे समयपर अपनी रुचि का भोजन मिलता है ।
ठंडी और गर्मी में उसका पूरा जतन किया जाता है ।
उसकी सेवा में दो नौकर तैनात है ।
घर के सभी सदस्य उसका बहुत ध्यान रखते हैं ।
सभी लोग
उसकी बहुत प्रशंसा करते हैं ।
उसका स्वभाव बहुत अच्छा है ।
उसके पास सभी सुविधाएँ हैं ।
उसके पास सम्पूर्ण सलामती है ।
फिर भी वह अपने आपको दुःखी मानता हैं ।
वह सोने के पिंजरे में बन्दी बना हुआ पक्षी है ।
वह हररोज पिंजरे के बाहर देखता है ।
सामने खड़े हुए पेड पर उसके जैसे कई पक्षी आते है,
मीठा कलरव करते हैं,
पंख फडफडाते हैं और उड जाते है ।
यह दृश्य देखकर उसका हृदय मानो छल उठता है ।
पिंजरे में वह पंख फडफडाता है जरुर लेकिन उड़ नहीं सकता ।
नीले गगन की गोद में पंख फैलाकर नीचे फैली हुई
सृष्टि का नयनरम्य आनन्द उसे नहीं मिलता ।
अब तो उसे सुविधा भी अच्छी नहीं लगती ।
वह सलामती को तिरस्कृत करता है ।



उसे तो सब कुछ छोड़कर सिर्फ स्वतंत्रता ही अच्छी लगती है ।
वह उसे पाना चाहता है ।
पंख फैलाकर मुक्त नीलाम्बर में उड़ने की स्वतन्त्रता चाहता है ।
हे प्रभु !
मुझे रहने के लिए सभी सुविधाओं से भरपूर घर मिला है ।
अच्छा भावनाशील परिवार मिला है ।
आर्थिक सद्धरता भी अच्छी है ।
समाज में नामना भी अच्छी मिली है ।
सुविधा और सुरक्षितता में भी कोई कमी नहीं है ।
फिर भी मैं सुखी नहीं हूँ ।
आज दिन तक मैं यह नहीं समज पाया था कि
मैं सुखी क्यों नहीं हूँ ?
लेकिन, आपको देखने के बाद मैं अपना दुःख
बहुत अच्छी तरह से समजने लगा हूँ ।
आज तक ''सुविधा और सुरक्षितता'' ही सुख है,
यह मानकर मैं प्रयत्न करता रहा ।
उसमें मैं सफल भी रहा, लेकिन उसके बदले में
मैं अपनी स्वतन्त्रता खो बैठा ।
सुविधा और सलामती को सुख
मानने की मेरी भ्रमणा इतनी गाढ़ हो गई कि
मैं मेरी वास्तविक स्वतन्त्रता तरफ बेध्यान हो गया ।
आपका दर्शन करके मेरी अन्तरात्मा जागृत हो गई है ।
उसे स्वतन्त्रता की पहचान हो गई है ।
लेकिन हे प्रभु !
मेरा ये पिंजर मुझे इतना अच्छा लगता है कि
कोई मुझे पिंजरे की बाहर निकाले तो भी अच्छा नहीं लगता ।



मुझ पर इतनी हद तक पागलपन छाया हुआ है कि
कोई मुझे पिंजरे से बाहर निकाले
तो भी मैं अपने आप वापस आकर पिंजरे में बैठ जाता हूँ ।
अन्य लोग पिंजरे से बाहर आने के लिए उत्सुक है ।
जबकि मैं पिंजरे में रहने के लिए तत्पर हूँ ।
लाख समजाने के बावजूद भी ये अनादि का अभ्यस्त मन
मानता ही नहीं है ।
एक और आतमा इस बन्धन से छुटकारा चाहती है तो दूसरी ओर
मन बन्धन चाहता हैं ।
लगता है इसी असमंजस में ही मेरी आयु पूरी हो जाएगी ।
इसलिए हे प्रभु !
मैं दुविधा में फँसा हुआ हूँ,
मेरी आयु पूरी होने से पहले मुझे इस पिंजर
में से छुटकारा दे दो ।
कम से कम इस बन्धन को आलम्बन मानने का
पागलपन दूर कर दो यही मेरी विनती है ।
इतनी कृपा जरुर करना ।

## मग्गाणुसारिआ

*आपके मार्ग पर चलने की शक्ति मीले ।*

हे प्रभु !
मंजिल दूर हो और रास्ता कठिन ।
कदम-कदम पर आपत्ति खड़ी हो और
वातावरण प्रतिकूल हो ।
पैर थक गए हो और सामने विशाल पन्थ हो
फिर भी पथिक स्थल प्रति की श्रद्धा और
विश्वास के बल पर चल सकता है ।
उसी तरह आपके प्रति श्रद्धा से पैदा हुआ
विश्वास, अगर दिल में स्थिर हो जायें तो
आपके दिखाये हुए राह पर चलने में
बिलकुल कठिनाई नहीं होगी ।
लेकिन मुसीबत यहाँ हैं कि-
मैंने हमेशा बुद्धि पर ही प्राधान्य रखा है ।
बुद्धि के सहारे जीता-जागता रहा हूँ मैं,
मुझे न आपकी श्रद्धा का अनुभव हैं और
न तो आपके प्रति विश्वास का अहेसास ।
इसलिए ही मेरे जीवन में न तो प्रेम है कि
न तो माँ की गोद में सोते हुए बच्चे
जैसी निश्चिंतता और निर्भयता ।
मेरा मन अनेक शंका-कुशंका से भरा हुआ है ।
और अविश्वास से छलक रहा है ।
मेरी बुद्धि के सिवा मुझे हर चीज पर शक होता है ।
मुझे अपने आपके सिवा किसी पर भी विश्वास नहीं हैं ।



मेरी हरेक चीज की मुझे चिन्ता रहती है ।
अन्य दूसरों की ओर से मुझे भय लगा रहता है ।
अविश्वास, सन्देह, चिन्ता और भय इस
चार महारिपु में फँसा देने का काम
मेरी ये नादान बुद्धि ने ही
किया हैं ।
हे प्रभु !
मुझे इससे बाहर निकालो ।
मुझे प्रेम करना सीखा दो ।
मुझे विश्वास रखना सीखा दो ।
दिमाग के बदले मैं दिल का उपयोग करूँ
ऐसी कला सीखा दो ।
तब ही मैं आपके बताये हुए मार्ग पर
अच्छी तरह से चल सकूँगा ।
आपके द्वारा निर्देशित किया हुआ मार्ग मुझे मेरे घर की ओर ले
जाएगा, ऐसा विश्वास मुझ में जगा दो ।
आपको ही ये विश्वास मुझ में जगाना होगा
क्योंकि
आपही मेरी प्यारी-प्यारी माँ हो ।
माँ ही नहीं बल्कि माँ से भी कुछ विशेष हो ।
मेरी ऊँगली पकड़कर आपको ही मुझे चलना सीखाना है ।
मुक्ति की मंजिल तक की सफर सरल
बनाने की जिम्मेदारी सिर्फ आपकी ही हैं ।



## इट्ठफलसिद्धि

*प्रभु ! मुझे इष्ट फल की सिद्धि प्राप्त हो ।*

हे प्रभु !
मेरी एक मात्र इच्छा परमात्मा बनने की है ।
मेरी यह इच्छा सफल
बनाने के लिए मैं आपको मेरे हृदयमन्दिर में बिराजित करना
चाहता हूँ ।
मुझे पता है,
जहाँ आसक्ति है, आप वहाँ
नहीं रहते ।
इसलिए मुझे मेरे दिल की आसक्ति दूर करनी हैं ।
येनकेन प्रकारेण संसार मेरे दिल को हड़प करना चाहता है ।
कभी सम्पत्ति की लालच देकर,
कभी सम्पत्ति का अभिमान पैदा करके,
कभी सुखों में हँसाकर,
कभी तुच्छ दुःखों में रूलाकर,
कभी विषयों के आवेग में डूबाकर,
कभी कषायों के आवेश में भान भूलाकर,
कभी सुन्दर रुप में मोहित कर,
कभी रस में मस्त बनाकर,
कभी स्पर्श में, कभी शब्द में, कभी गन्ध में
आसक्त बनाकर, कभी स्वार्थ पैदा कर,
कभी ईर्ष्या में जलाकर, कभी हर्ष पैदा कर,
कभी गमगीन बनाकर ।
किसी भी तरीके से ये संसार आपकी पवित्र मूर्ति को मेरे

हृदयमन्दिर में से निकाल देना चाहता है ।
लेकिन मुझे ये मंजूर नहीं है ।
हे प्रभु ! जब जब संसार मुझे आपसे दूर करें
तब तब आप मुझे नजदीक ले लेना ।
जब जब संसार मुझे अपनी सुध-बुध भूला दें,
आप मुझे जगा देना ।
आपसे दूर ले जानेवाले ऐसे सुखों के
बदले में आपके समीप लाएँ ऐसी सद्‌बुद्धि
को में प्रथम पसन्द करुँगा ।
आपकी याद भूला दें ऐसी दुर्बुद्धि
के बदले में आपकी याद निशदिन सतावे
ऐसे दुःखों को मैं सन्मानूँगा ।
यदि आप मुझे मिलते हैं तो जगत के तमाम
दुःख मेरे लिए इष्ट है । आप नहीं
मिलते हैं तो सारे विश्व का राजसुख भी
मेरे मन अनिष्ट है ।
आपकी प्राप्ति ही मेरे लिए एक इष्टफल है ।
आप ही मेरा इष्ट ।
आप ही मेरा फल ।
आप ही मेरी सिद्धि ।



## लोगविरुद्धच्चाओ

*शिष्ट लोक में निन्दित कर्म कभी न करुँ ।*

काँटा, चाहे छोटा हो या बड़ा, लेकिन जब
पैर में चुभता है तो दर्द होता ही है ।
दोष, छोटा हो या बड़ा, जब अन्तर में प्रवेश
करता है तो डंख देता ही है ।
पैर में चुभा हुआ छोटा-सा काँटा भी चलने
नहीं देता । उसी तरह अन्तर में घुसा हुआ
छोटा-सा दोष भी शुभ प्रवृत्ति नहीं करने देता ।
हे परमात्मा !
अच्छे लोग जिसे बुरा कहते हैं, वैसे बड़े
बड़े दोष भले ही मेरे जीवन में भले ही न हो, लेकिन
छोटे-छोटे दोष तो बहुत सारे है ।
ब्लेड छोटी होती है और तलवार बड़ी होती है ।
फिर भी मारने का गुण दोनों में समान है ।
तलवार एक ही झटके में गला उड़ा देती है,
तो ब्लेड नसों को काटकर मारती है ।
दोनों की शक्ति और सामर्थ्य में भले ही
अन्तर हो, बल्कि नतीजा तो समान होता है ।
हे प्रभु !
जैनकुल में जन्म मिलने के कारण
और धर्मसंस्कार से सुवासित माता-पिता
मिलने पर मैं तलवार की तरह
शुभभावों को नाश करनेवाले दोषों से तो बच गया हूँ ।
लेकिन ब्लेड की तरह छोटे-छोटे टुकडे करनेवाले



लघु दोषों से अपने आपको कैसे बचा सकुँ ?
हे प्रभु !
मैं किसी का अपमान
करते हिचकिचाता नहीं हूँ ।
बिना कारण अन्य की टीका करने में मुझे
बहुत आनन्द मिलता है ।
उतना ही आनन्द मुझे दूसरों की टीका सुनने
में भी आता है ।
कोई मेरे दोष दिखायें या सुनाएँ तो
मुझे बहुत गुस्सा आता है ।
मैं हमेशा अपने दोष को छुपाने में
निपुण रहा हूँ ।
मैं अपने आपको 'सुप्रीम' समजता हूँ ।
मेरे स्वार्थ के लिए अन्य का नुक्सान
करने में मुझे बिलकुल संकोच नहीं होता ।
मेरी ये आँखे अमर्याद और बेफाम है ।
झूठ बोलना मेरे लिए बिलकुल आसान है ।
थोडी सी धनप्राप्ति के लिए मैं बेईमानी और
अनीति के पथ पर चलने के लिए तैयार हूँ ।
अन्य लोगों की प्रगति मेरे लिए असह्य है ।
मुझ में इतना क्रोध है कि लोग मुझे
टाईमबोम्ब की उपमा देते हैं ।
राजनीतिज्ञ की तरह छलकपट में मैं माहिर हूँ ।
चूहे की तरह मेरे मन के शुभाशयों को फूँक-फूँक कर कतरनेवाले
इस कातिल दोषों से बचने
का मुझे एक ही उपाय दिखाई देता है, और

वो है मन को सदाचार का कवच पहनाने का ।
मेरी आँखो को आपकी प्रतिमा के साथ जोड दूँ ।
मेरी जिह्वा को आपकी स्तुति के साथ बाँध दूँ ।
मेरे पैरों को आपकी यात्रा के साथ संकलित करुँ ।
मेरे हाथ को आपकी पूजा के साथ सम्बन्धित करुँ ।
मेरे मन को आप के गुणों में पिरो दूँ ।
मुझे मिलने वाले हर एक को मैं अपना मित्र मानूँ ।
दूसरों के सद्‌गुण देखने का प्रयत्न करुँ और
गुण-प्रशंसा करने की आदत डालूँ ।
दूसरों के दुर्गुणों के प्रति मैं ध्यान न दूँ ।
दु:ख में सहानुभूति रखूं और
मन को शांत, सरल, समर्पित और सन्तोषी बना दूँ ।
प्रभु !
इतने सरल नियम भी अपनाने में मुझे बहुत कठिन लगते हैं ।
फिर भी में नचिंत हूँ ।
क्योंकि आप मेरे सारथी हो ।
मैंने अब मेरी चिन्ता आपको सौंप दी है ।
गाडी के साथ जुडे हुए बैल को या रथ के
साथ जुडे हुए घोडे को रास्ता भूलने का डर
कभी नहीं लगता, क्योंकि
उसने अपनी लगाम सारथि के हाथ में सौंप दी होती है ।
हे प्रभु !
मेरी भी लगाम मैंने तेरे हाथ में रख दी हैं ।
*अब सौंप दीया इस जीवन को*
*भगवान तुम्हारे चरणो में*
मुझे सम्हालोगे ना ?



## गुरुजणपूआ

*मेरे गुरुजनों का आदर करुँ !*

पिता के वचन को निभाने के लिए रामचन्द्रजी ने
वनवास का स्वीकार किया ।
अन्ध मातापिता को कावड में बिठाकर श्रवणकुमार ने
तीर्थयात्रा करवाई ।
पिताश्री का पत्र पढ़कर कुणालकुमार अन्धा
बन गया ।
रामचन्द्रजी, श्रवण और कुणाल तीनों ही महान
व्यक्तिओं ने मातापिता का प्रेम जीतने के लिए
भव्य बलिदान दिया ।
रामचन्द्रजी ने राजगद्दी के बदले वनवास को
प्रिय किया । श्रवण ने कारकिर्दी से
भक्ति को महत्व दिया । कुणाल ने भविष्य
के बजाय विनय को पसन्द किया ।
क्योंकि मातापिता का प्रेम जीतने की उनकी
भावना उच्च और तीव्र थी ।

जिस तरह आँखे खुली रखकर सोना
असम्भवित है, तपती धूप में शीतलता की
आशा रखना व्यर्थ है,
उसी तरह मन में अभिमान रखकर प्रेम
देना या प्रेम जीतना असम्भव है ।
हे प्रभु !
आप, गुरुभगवन्त और मातापिता आदि गुरुजन-



इन तीनों के प्रति समर्पण भाव रखने से ही
मेरा जीवन सार्थक बन सकता है ।
लेकिन मैं इन तीन तत्त्वों में से प्रत्यक्ष जीवन में
मेरे सबसे करीब रहनेवाले मेरे मातापितादि-
गुरुजन का प्रेम ही नहीं जीत सका हूँ और
उनको मैं प्रेम दे भी नहीं सका हूँ ।
तो गुरुभगवन्त के प्रति या आप के प्रति
मैंने समर्पण भाव पैदा किया है, ऐसा कैसे कह सकता हूँ ?
हे प्रभु !
मेरे इस तुच्छ अभिमान को दूर करना ।
रामचन्द्र, श्रवण और कुणाल जैसे उत्कृष्ट
विनय-आदर और समर्पण के फूल मेरे जीवन में
जब तक नहीं खिलते तब तक बस एक ही
प्रार्थना करता हूँ कि राम की तरह पिता के
वचन के खातिर मैं गृहत्याग भले ही न कर
सकूँ, लेकिन मेरे खातिर माँ-बाप को गृहत्याग
करना पडे इतना स्वच्छंदी और स्वार्थी
मैं कभी ना बनूं ।
श्रवण की तरह मातापिता को कंधे पर
बिठाकर तीर्थयात्रा भले ही न करवाऊँ, लेकिन
बुढ़ापे में उनका विश्वास तोडकर उनको
न ठुकराऊँ ।
कुणाल की तरह पिता के वचन को निभाने के
लिए मैं भले ही अपनी आँखे निकालकर
न दूँ, परन्तु मेरे मातापिता की आँखों में
से अश्रुवहन होने में निमित्त ना ही बनूँ ।

## परत्थकरणं च

*मैं परोपकार के कार्य निरन्तर करुं ।*

फूल काँटे अपने पास रखते हैं और
परिमल अन्य को देते हैं ।
वृक्ष धूप और ताप स्वयं सहन करता है
लेकिन अन्य को छाँव देता है ।
सरिता खुद सागर में समाकर खारी
हो जाती है परन्तु दूसरों को मीठा
जल ही देती है ।
प्रकृति हर चीज में परार्थभाव ही
दिखाई देता है । एक मनुष्य ही ऐसा प्राणी है,
जो लगातार अन्य को लूटता रहता है ।
मानव के पास दूसरों को देने के लिए दो
मूल्यवान भावनाएँ है : सद्भाव और सहानुभूति ।
लेकिन कुछ देने की बात मनुष्य का मस्तिष्क
स्वीकार ही नहीं करता ।
हे परमात्मा !
परार्थभावना के अभाव से दूसरों का अस्तित्व
स्वीकारने के लिए भी मैं तैयार नहीं हूँ ।
इसी कारण मैं अन्य से अलग हो गया हूँ ।
मेरे जीवन की सभी यातना का मूल यही है :
दूसरों की उपेक्षा करना और
दूसरों से अपेक्षा रखना ।
नदी पर्वत से ही निकलती है,
लेकिन जैसे जैसे सागर के समीप पहुँचती है



वैसे वैसे विशाल होती जाती है ।
इतना ही नहीं, किनारों पर
हरियाली फैला देती है ।
पर्वत जैसे जैसे ऊँचा जाता है, वैसे वैसे
संकुचित होता जाता है । इसलिए तो पर्वत पर
कुछ पैदा नहीं होता है ।
हे प्रभु !
मेरी आपसे नम्र अरज है कि पर्वत जैसे
अभिमान और संकोचवृत्ति को दूर करके
विशालहृदया नदी की तरह मुझे भी विशाल
हृदय का स्वामी बनाना ।

*हम न सोचे हमे क्या मीला है*
*हम ये सोचे किया क्या है अर्पण*
*फूल खुशियों के बांटे सभी को*
*अपना जीवन ये बन जाये मधुबन*
*अपनी करुणा का जल तूं बहा दे*
*कर दे पावन हर एक मन का कोना.....*
*इतनी शक्ति हमें देना दाना ।*



## सुहगुरुजोगो

*मुझे शुभ गुरु का योग हो ।*

राजा के महल में ध्वजा और कालीन के बीच
चर्चा हुई ।
ध्वजा ने फरियाद के सूर में कालीन से कहा
''तुम कितनी सुखी हो ! है कोई तुम्हें तकलीफ ?
तुम तो महल के मुख्य दीवानखण्ड में
आराम से पडी रहती हो । कहीं जाना
नहीं और कुछ करना भी नहीं ।
मुझे तो सारा दिन हवा के झोंके लगे रहते हैं ।
गर्मी और ठंडी भी सहन करनी पड़ती हैं ।
जब भी युद्ध होता है, तो
मुझे सबसे आगे रहना पड़ता है ।''
कालीन ने उनका उत्तर देते हुए कहा :
''ध्वजाबहन ! सच कहुँ ? आपके दुःख का
और मेरे सुख का मुझे तो सिर्फ एक
ही कारण दिखाई देता है । आपको तो
सबकी उपर और सबसे आगे रहना ही
अच्छा लगता है । इसलिए आप दुःखी हो ।
मैं सबके पग के नीचे ही रहती हूँ, इसलिए
ही सुखी हूँ ।''
हे परमात्मा !
इस जगत में सबको महान बनना अच्छा
लगता है लेकिन महत्ता
का मूल्य चुकाने की किसी की तैयारी नहीं है ।

मेरी भी यही हालत है ।
''लघुता में प्रभुता बसे,
प्रभुता से प्रभु दूर ।''
यह सन्त वचन को मैं जानता हूँ फिर भी ।
विचित्रता यही है कि मुझे
छोटा बनना अच्छा नहीं लगता
जिस तरह शरीर वजन जरुरत से ज्यादा बढ़
जाता है तो शरी अनेकानेक रोगों का घर बन जाता है ।
उसी तरह मन में अहंकार का वजन
बढ़ जाता है तो मन अनेक दोषों का घर
बन जाता है ।
इसलिए
हे प्रभु !
अहंकार से भरे हुए मेरे मन को दोषों से
बचाने के लिए अनुशासन करें
मन के विषय और आसक्ति पर काबू
रख सकें और सुखशीलता को दूर कर सकें
ऐसे मार्गदर्शक गुरु की मुझे बहुत जरुरत है ।
आप तो जगत्गुरु हो ।
जब तक आप मेरे गुरु नहीं बनते तबतक
कृपा करके एक ऐसे
सद्गुरु से भेंट करा दो
जो आपके साथ मेरा मिलाप करा दें ।



## तव्वयणसेवणा अभावमखंडा

*जबतक संसार में हूँ तबतक गुरु के वचनो की सेवा करुँ ।*

अर्जुन ने धनुष्यकला आचार्य द्रोण जैसे कुशल कलागुरु के
मार्गदर्शन से प्राप्त की थी ।
उसी प्रकार की धनुष्यकला
एकलव्य ने आचार्य द्रोण के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन
के बिना ही हाँसिल की थी
अनन्य और असाधारण समर्पण के प्रभाव से ।
जिस प्रकार नैया पानी में डूबते
हुए को बचाने का काम भले ही करती हो
लेकिन नदी या सागर के उसपार
पहुँचने के लिए हमें पतवार की जरुरत पड़ती है ।
उसी प्रकार गुरु का योग
संसार से बचाने का
काम भलें ही करे लेकिन मुक्ति के
किनारे तक पहुँचने के लिए समर्पण
और कृपा के बिना नहीं चलेगा ।
इसलिए है भगवन्त !
आपके पास मैं इतनी याचना करता
हूँ कि गुरु तो मुझे जन्मोजन्म
मिलते रहें लेकिन गुरु के वचनों का
आदर जब तक संसार रहें तब तक
अखण्डित रहें ।



## वारिज्जई जइवि नियाणबंधणं
## वीयराय ! तुह समए ।
## तहवि मम हुज्ज सेवा
## भवे भवे तुम्ह चलणाणं ॥

*हे वीतराग ! आपने प्रभुके पास*
*मागनेका निषेध किया है फिरभी*
*में जनम-जनम आपकी पदसेवा*
*मीले ऐसी चाहना रखता हूँ ।*

प्रसन्न मन सुखी होने का प्रथम
और अन्तिम चिह्न है । जब कि
अप्रसन्न मन दुःखी होने का प्रथम और
आखरी चिह्न है ।
हे परमकृपालु परमात्मा !
जब से मुझ में समज आई है तब से मैं
खोई हुई 'मन की प्रसन्नता' की
तलाश में रहता हूँ ।
किन्तु निराशा ही हाथ लगी है ।
आपकी बात मुझे बिलकुल सच लगती है ।
''संसार में रहकर प्रसन्नता प्राप्त
करना असम्भव है ।
गन्दे पानी के नाले में गुलाब का
फूल कैसे खिल सकता है ?
आसपास के संजोग

ही ऐसे है कि मनुष्य का निर्मल मन भी
दम्भ, दोष और दुर्भाव से
कलुषित हो जाता है । और संक्लेश का
भाजन बन जाता है ।
संसार में रहकर मन को सहज,
स्वस्थ और सरल बनाना बहुत ही कठिन काम हैं ।
मेरा उदास चहेरा और मेरे नकारात्मक विचार
ही बताते हैं कि मेरे मनमें
कितना संक्लेश भरा हुआ है ?
संक्लेश को दूर किये बिना
प्रसन्नता कभी नहीं आती और
शुभभाव के बिना संक्लेश हटता ही नहीं ।
ऐसा शुभभाव आपकी
सेवा के बिना मिलता ही नहीं ।
अतः हे प्रभु !
मुझे जन्मोजन्म आपकी सेवा मिलें ।
मैं तो नीच, अधम, पापी और
कुपात्र हूँ फिर भी मैं
आपका ही हूँ ।
हे प्रभु ! पापी समजकर आप मुझे दूर करोंगे
तो मैं कहाँ जाऊँगा ?
चाहे कितना भी गन्दा मनुष्य जब गुलाब
के पास जाता है तो उसे सुवास का ही अनुभव
होता है । उसी तरह महान पापी भी
आपकी शरण में आयें तो
उसे प्रसन्नता का ही अनुभव होता है ।



गुलाब दूसरों को सुगन्ध देता है लेकिन
सुगन्धित नहीं कर सकता ।
परमकृपालु परमात्मा आप तो प्रसन्नता देते भी हो और
भक्तजन को सहज प्रसन्नता के स्वामी बना भी सकते हो ।
इसलिए ही मैं आपसे बिनती
करता हूँ कि इस दास को भवोभव
आपकी सेवा का अधिकार प्राप्त हो ।
*''प्रभु मेरे अवगुण चित्त न धरो*
*समदरसी है नाम तिहारो*
*चाहे तो पार करो ।''*



## दुक्खक्खओ

*मेरे सारे दुःख दूर हो !*

मलिनता से भरे हुए हाथ से
मुँह साफ करना असम्भव है ।
कादव से भरे हुए झाडू से घर की सफाई
करना असम्भवित है ।
यानि कि मुँह साफ करने के लिए हाथ
स्वच्छ रखना जरुरी है तो घर को साफ-
सुथरा बनाने के लिए झाडू भी
स्वच्छ रखना जरुरी है ।
उसी प्रकार दुःखो से बचते रहना
है तो दुर्भावनाओं से दूर रहना अनिवार्य है ।
गन्दे झाडू से या गन्दे हाथ से तो गन्दकी
बढ़ती ही है वैसे ही दुर्भावनाओं
से भरे हुए मन से दुःख ही बढ़ते हैं ।
हे परमकृपालु परमात्मा !
दुर्भावनाओं से भरा हुआ मेरा मन
और दुःखों से भरे हुए मेरे जीवन को
देखकर मेरे भाविकी मुझे
एक ही शक्यता दिखाई देती है और वो है
मेरी 'दुर्गति' ।
मृत्यु के बाद की
गति का मुझे अंदाज नहीं । बल्कि
लगातार संक्लेशग्रस्त मनने मेरे
वर्तमान जीवन को भी दुर्गति जैसा ही बना रखा है ।

हे प्रभु !
तेरा भक्त होकर मेरी दुर्गति हो, क्या ऐसा
तुमको शोभा देगा ?
क्या तुम मुझे इससे छुटकारा नहीं दोगे ?
मुझे तुम पर पूरा यकीन है प्रभु !
तुम मुझे जरुर छुडवाओगे ।
तुम ही मुझे मुक्त कराओगे,
इन दुःखों से,
दोषों से,
दुर्मति से और दुर्गति से ।



## कम्मक्खओ

*मेरे सारे कर्मों का नाश हो ।*

एक राजा ने सुप्रसिद्ध चित्रकार
को चित्र बनाने की आज्ञा दी ।
विषय दिया-''पृथ्वी पर का स्वर्ग''
इसकी खोज में चित्रकार बहुत घुमा ।
आखिर में उसने उसी नगर के एक
छोटे-से बच्चे का खिखिलाकर हँसते चहेरे का
चित्र बनाकर राजा को बताया ।
राजा अति प्रसन्न हुआ ।
कई साल बीत गये । राजा ने चित्रकार को फिर यदि किया ।
एक और चित्र बनाने का हुक्म दिया ।
इस वक्त विषय दिया - ''पृथ्वी पर का नर्क ।''
चित्र की खोज में चित्रकार इस वक्त भी बहुत घुमा ।
इस वक्त वह केदखानो में गया ।
एक बहुत बड़े गुनेगार की
मुलाकात ली और उसका चित्र बनाया ।
चित्रकार ने सोचा कि इसबार भी मेरा
यह चित्र जगविख्यात बनेगा ।
उस गुनेगार ने चित्रकार से पूछा :
'आप मुझे पहचानते हो ?'
चित्रकार ने कहा - ''नहीं ।''
गुनेगार ने उत्तर दिया - ''कई साल
पहले एक छोटे बच्चे का आपने चित्र बनाया था ।''
चित्रकार ने कहाँ - ''हाँ ।''



तब गुनेगार बोला - ''मैं वही बालक हूँ ।''
हे प्रभु !
इस रुपककथा में और
मेरे जीवन में फर्क सिर्फ इतना है कि मेरी
जिन्दगी का चित्रकार भी मैं ही हूँ ।
कुविचार और कुसंस्कार की बदी के
बीच जीकर नन्दनवन जैसी इस
सुहावनी जिन्दगी को मैंने स्मशान जैसी भयावह बना दी है ।
इसके लिए कर्मो को दोष देकर मैं कर्मो
के फल से मुक्त होने की कोशिश करुँ वह व्यर्थ हैं ।
क्योंकि बबूल के शूलों को मेरे हाथों से
बोने का पागलपन भूतकाल में मैंने ही किया है ।
और वर्तमानकाल में मैं उसे जड़-मूल
से काटने के बजाय उसकी शाखाएँ
काटने की दूसरी बड़ी मूर्खता कर रहा हूँ ।
मुझे कर्मो के फल से या कर्म से नहीं,
किन्तु कुविचार और कुसंस्कार से बचने की
जरुरत है । मेरे अंतःकरण में से सुख का
प्रेम और दुःख का डर, धन की लालसा
और भोग की लालच, हृदय की वक्रता और
बुद्धि की विचित्रता जैसे अनेक कुविचार और
कुसंस्कार दूर हो जाएँ ऐसे
विचार और संस्कार की मुझे पात्रता दें ।
बस इतना ही मैं माँगता हूँ ।

## समाहिमरणं च

*और मृत्यु के समय समाधिभाव मीले ।*

गुजराती में एक है । कहावत है -
''બધુ સારું જેનો અંત સારો''
( जिस का अन्त अच्छा, वह सब कुछ अच्छा )
हे प्रभु !
एक दिन मेरे जीवन का अन्त आना ही है,
कब ? कहाँ ? कैसे ? वो मैं नहीं कह सकता ।
मेरा अन्त अच्छा होगा या बूरा ये मैं नहीं जानता ।
लेकिन अच्छा अन्त लाने के लिए
शुरूआत भी अच्छी होनी चाहिए,
मध्यांतर भी अच्छा चाहिए और
गति भी अच्छी ही होनी चाहिए ।
अच्छे फल पाने के लिए बीजांकुर का भी
अच्छा होना उतना ही जरुरी है ।
और साथ साथ खाद और पानी भी उचित मिले ये
बहुत आवश्यक है ।
मेरे जीवन में सद्‌गुणों के कई बीज केवल
अच्छे खाद और पानी के अभाव से निष्फल गए हैं ।
मरना तो निश्चित है लेकिन
लाचार बनकर, जिन्दगी की भीख माँगकर,
दीन-हीन बनकर, रोते हुए, हृदय में तृष्णा



और लालसा को साथ, मन में इर्ष्या और
शरीर में वेदना लेकर मुझे नहीं मरना है ।
मुझे तो हँसते-हँसते मरना है ।
मरना नहीं है, मुझे तो मृत्यु से भेटना है ।
हे प्रभु ! मैं जानता हूँ ।
जिसके जीवन में, जिसको जीते जी कभी
''समाधान'' न मिला हो उसे मृत्यु के समय
''समाधि'' मिल सकती है ?
अगर अमृत पीना है तो हाथ में पकड़े
हुए जहर के प्याले को फेंकना ही पड़ता है ।
उसी प्रकार जीवन में अगर समाधान चाहिए
तो हृदय में रखे हुए संघर्ष का त्याग भी
करना ही पड़ता है ।
हे परमात्मा !
संसार के कपोल कल्पित सुख की सामग्री
का संग्रह करने के लिए मैं
बेमिसाल संघर्ष करता रहा हूँ ।
संघर्ष किये बिना संसार का सुख नहीं मिलता ।
संघर्ष का मतलब होता है अपने और परायों के
दिल में पैदा हुए कषाय और क्लेश का मिश्रण ।
हे प्रभु !
मैं अच्छी तरह से मरना चाहता हूँ इसलिए
ही मैं अच्छी तरह से जीना चाहता हूँ ।



उत्तम जीवन के लिए मैं संघर्ष नहीं करुँगा ।
संघर्ष का जवाब नहीं दूँगा ।
किसी का भी बूरा नहीं सोचूँगा ।
किसी का भी बूरा नहीं बोलूँगा ।
किसी का भी बूरा नहीं करुँगा ।
मैं आपको यह वचन देता हूँ ।
हे प्रभु !
अब तो मुझे तारोगे न ?
*मन में न मान होवे,*
*दिल एकतान होवे,*
*तुम चरण ध्यान होवो,*
*जब प्राण तन से नीकले ।*

## बोहिलाभो अ

*मुझे सद्दृष्टि प्राप्त हो !*

हे प्रभु !
मेरे जीवन की तमाम समस्याओं का मूल है
संसार पर का गाढ़ विश्वास और तीव्र आसक्ति ।
इस आसक्ति के कारण संसार के
सभी पदार्थो प्रति आकर्षण पैदा हुआ है ।
और इस आकर्षण के कारण मुझ
में गलत अभिगम उत्पन्न हुआ है ।
'संसार अच्छा है और संसार मेरा है'
यही अभिगम अब मुझे सच्चा लगने लगा है ।
और इसलिए ही संसार मेरे आत्मा के अणु-
अणु में व्याप्त हो गया है ।
आपकी कृपा के बल पर
सारे संसार से मुझे मुक्ति मिलें ।
ऐसी मेरी मनोकामना है ।
लेकिन जब तक मुझे इस संसार से
मुक्ति न मिलें तब तक मुझे कमलपत्र जैसी
निर्लेपता के स्वामी बना दो, जिससे ये
संसार मेरे अन्तरात्मा को अछूत न कर जायें ।
पानी में पड़ा हुआ नमक का टुकडा पिगल जाता है,
क्योंकि वह पानी को भीतर प्रवेश देता है ।
लेकिन पथ्थर पानी में रहकर भी पिगलता नहीं है,
क्योंकि वह पानी को अपनी उपरी सतह
से आगे जाने ही नहीं देता ।



संसार में रहकर भी संसार मेरे
भीतर न प्रवेश जाएँ ऐसी कला मुझे
सीखा दो ।
''संसार मेरा नहीं है, संसार अच्छा नहीं है
इतनी सुमति मुझे मिल जाएँ तो मानो
कि मुझे सब कुछ मिल गया ।
हे परमात्मा !
आपके पदकमल में शीश झुकाकर
मैं प्रार्थना करता हूँ ।
मेरी प्रार्थना का आपने स्वीकार किया
या नहीं ? वह तो मैं अपने आप में होने वाले
परिवर्तन के द्वारा जान सकूँगा ।
मेरी योग्यता को जाने बिना मैंने
आपसे माँगा है, आपकी प्रभुता देखकर ।
आपकी प्रभुता पर मुझे पूरा विश्वास है

*संपज्जउ मह एअं तुह नाह पणाम करणेणं ।*
*आपको प्रणाम करने से मेरी ये प्रार्थनाएँ सफल हो*

सर्व मंगल मांगल्यं, सर्वकल्याण कारणम् ।
प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयति शासनम् ॥

*सर्व मंगल में श्रेष्ठ सर्व कल्याण कर सर्वश्रेष्ठ*
*श्रीजैनशासन जयवंत है ।*